इतिवृत्त

17 वीं 18 वीं शताब्दी में शिक्षा व्यवस्था

❑ डा. एल. एन. मित्तल

ब्रिटिश पूर्व भारत की शिक्षा-प्रणाली को लेकर इतिहासकार एकमत नहीं हैं । जबकि कुछ लोगों की मान्यता है, ब्रिटिश पूर्व भारत में शिक्षा सिर्फ प्रभु-वर्ग को ही सुलभ थी, इसके विपरीत कुछ लोग इस काल को शिक्षा की दृष्टि से स्वर्ण युग जैसा मानते हैं । गांधी जी और इतिहासकार धर्मपाल की मान्यता है कि अंग्रेजों ने भारत की सुदृढ़ और व्यापक देशज शिक्षा-प्रणाली को तहस-नहस कर दिया । ब्रिटिश पूर्व भारतीय इतिहास को लेकर अनुसंधान अभी जारी हैं । हम शिक्षा के देशज स्वरूपों पर वस्तुपरक ओर प्रामाणिक जानकारी आरंभ से प्रकाशित करते रहे हैं ।

भारत में ब्रिटिश आधिपत्य और उससे उत्पन्न गुलाम मानसिकता ने भारत को उसकी आत्मा से विलग करने के प्रभावी प्रयास किए हैं । कोई भी समाज अपने निजी परिवेश और अपने देशज ज्ञान से ही अपनी नियति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है ।

धर्मपाल जी ने गत तीस वर्षों से हमारे देश के इतिहास के उस अंश को खोजा है जो अठाहरवीं-उन्नीसवीं शताब्दी में हमारी धरोहर की अपनी तमाम शक्तियों के बारे में देश और विदेश के पुस्तकालयों और अभिलेखागारों में उपलब्ध है, कि वास्तव में अंग्रेजों के आगमन से पहले भारत की राजस्व व्यवस्था, शिक्षा, राजनैतिक-व्यवस्था, आर्थिक संस्थाएं और अन्य सामाजिक-धार्मिक व्यवस्थाएं अपने तरीके से चलती थीं । वास्तव में हमारा समाज और उसकी व्यवस्थायें दूसरे ढंग से चलती थीं, उनकी बैठक अलग थीं । वे अलग अवधारणाओं पर खड़ी की गईं थी। आज की अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय युवाओं के मानस पर एक ऐसी तस्वीर स्थापित कर दी है कि इस देश में अंग्रेजों से पहले शायद हम असभ्य और असंस्कृत थे और हमारी निजी संस्कृति और परिवेश में, हमारी सामाजिक व्यवस्था में, हमारी अपनी भाषा और बोली में केवल रूचियां, अन्धविश्वास और पिछड़ापन ही है और उसमें जानने समझने लायक कुछ भी नहीं है, अत: उसमें से ग्रहणीय भी कुछ भी नहीं है । धर्मपाल जी के अनुसंधान के काम से पता चलता है कि भारत का अतीत, विशेषकर, अंग्रेजों से पूर्व का भारत अपने में पूर्ण था और उसकी उन्नत समाज व्यवस्था थी और समाज की अन्तर्धाराओं में ऐसा सामंजस्य था कि उससे भारतीय चित्त की सामाजिकता प्रगट होती थी । हमारे देश की परम्पराओं, मान्यताओं, विद्याओं और भारतीय स्वभाव का जो रूप सत्रहवीं अठारहवीं शताब्दी में सुलभ था, वह हमारी तत्कालीन कृषि, उद्योग, शिक्षा, बच्चों के पालन-पोषण, पड़ोसी देशों से हमारे रिश्ते आदि सभी से संबंधित था । धर्मपाल जी अपनी कृतियों में भारत के इसी स्वधर्म को उद्घाटित करते हैं । धर्मपाल जी गांधी जी की परम्परा के उन विरल मनीषियों में से हैं जिन्होंने अन्य समाजों के प्रति विद्वेष या घृणा अथवा किसी उग्रवादी तथाकथित राष्ट्रीय मुहावरे से बचते हुए भारत के स्वभाव का वर्णन किया है ।

श्री धर्मपाल जी का मानना है कि पिछले 200-250 वर्षों में अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था और उनके द्वारा फैलायी गई समाज व्यवस्था ने हमारा अकल्याण ही किया है और इससे हमारे ऊपर विपत्ति के बादल ही मंडराये हैं । लेकिन धर्मपाल जी मानते हैं कि इसका मतलब यह नहीं है कि हमारी शुरूआत सन् 1700 या 1750 के आसपास जैसा भारत था, उसी पर पूरी तरह आधारित होगी । पिछले दो-ढाई सौ साल में हमारे यहां जो बदला है, उसमें भी शायद कुछ काम का हो । आगे भी भारत से अन्यत्र पृथ्वी पर जो अन्य बदलाव आयें हैं उनमें से भी कुछ हमारे काम के हो सकते हैं । लेकिन बाहर का जो भी अपनाया जाये वह हमारे अपने विचारों, आधारों और स्वभाव के अनुकूल होना चाहिये ।

इस लेख में धर्मपाल जी के 'भारतीय शिक्षा' पर व्यक्त विचारों का संकलन है । धर्मपाल जी लिखते हैं कि भारत का एक बड़ा भाग ईसा की बारहवीं शताब्दी में लगातार इस्लाम-अनुयायियों के आक्रमण से टकरा रहा था और युद्धरत समाज व्यवस्था में अर्थतंत्र और शिक्षा में जो अस्त व्यस्तता आती है या उससे जिस बीमार समाज की तस्वीर उभरती है वह सर्वविदित है । अत: आगे जो कुछ भी लिखा जा रहा है उसे अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुए शिक्षा से संबंधित सर्वेक्षण उस क्षयशील और कमजोर समाज के सूचक हैं, यह ध्यान रखते हुए ही इन आंकडों को समझना चाहिये ।

अंग्रेजों ने सन् 1822-25 के मध्य तत्कालीन मद्रास प्रेसीडेन्सी में स्वदेशी शिक्षा की स्थिति का एक सर्वेक्षण करवाया था । तत्कालीन मद्रास प्रेसीडेन्सी में आज का पूरा तमिलनाडु, वर्तमान आंध्र प्रदेश का अधिकांश भाग और वर्तमान कर्नाटक के कुछ जिले, केरल के मालाबार का जिला व वर्तमान उड़ीसा का गंजाम जिला शामिल था । विलयम एड्म से वर्षों पहले, मद्रास के गर्वनर थामस मुनरो ने मद्रास प्रेजीडेंसी के बारे में यही कहा है कि ऐसा लगता है कि वहां हर गांव में एक स्कूल है । मद्रास प्रेजिडेन्सी में स्वशिक्षा की स्थिति के बारे में जानकारी एकत्रित करने हेतु गर्वनर थामस मुनरो ने एक निर्देश राजस्व-कलक्टरों को प्रसारित किया था। उसके आधार पर राज्य के मुख्य सचिव डी. हिल ने बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के अध्यक्ष व सदस्यों को एक पत्र लिखा। उस पत्र के आधार पर कलक्टरों की रिपोर्ट आयी । उन रिपोर्टों में विद्यालयों की संख्या उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति, विद्यालयी व्यवस्था की रूपरेखा, शिक्षकों की संख्या, विद्यार्थियों की संख्या, शिक्षकों और विद्यार्थियों की सामाजिक स्थिति व जातिगत स्थिति, पढ़ाये जाने वाले विषय, पुस्तकें, अध्यापन विधि, और छात्रों-अध्यापकों का योग्यता स्तर आदि संबंधित तथ्य सम्मिलित थे । गंजाम व विजागापट्टम के कलक्टरों ने वहां के बच्चों की भी जानकारी दी। मलाबार के कलेक्टरों ने वहां के 1594 विद्यार्थियों की एक सूची भेजी जो धर्मशास्त्र, विधि, गणित, ज्योतिष, तत्वज्ञान, नीतिशास्त्र एवं आयुर्वेद विषयों में अपने अपने गुरूओं के घर पर निजी तौर पर अध्ययनरत थे अर्थात ये किसी नियमित स्कूल या कॉलेज में न जाकर गुरूओं के घर में अपने-अपने विषयों में विशेषज्ञता हासिल कर रहे हैं । मद्रास के कलेक्टर की पहली रिपोर्ट में वही पढ़ रहे बच्चों की संख्या 5699 ही दर्शायी गई है ।

कलेक्टरों की रिपोर्ट के आधार पर मद्रास प्रेजिडेन्सी की सरकार ने 10 मार्च 1826 को उन रिपोर्टों की समीक्षा कर के गर्वनर थामस मुनरो ने निष्कर्ष निकाला कि :-

प्रेसीडेन्सी 5-10 आयुवर्ग के कुल लड़कों का लगभग एक चौथाई हिस्सा स्कूलों में शिक्षा पा रहा है । घर पर पढ़ रहे बच्चे इसके अतिरिक्त हैं । घर पर पढ़ रहे बच्चों की संख्या मिलाने पर कुल लगभग एक तिहाई के करीब विद्यार्थी पढ़ रहे थे, ऐसा निष्कर्ष निकलता है ।

लड़कियों की स्कूली शिक्षा की कमी के बारे में थामस मुनरो ने यह स्पष्टीकरण दिया है कि उनकी पढ़ाई मुख्यत: घरों में ही होती है । इस समीक्षा रिपोर्ट में विद्यार्थियों की जातिवार संख्या और अन्य स्कूल संबंधी विवरण उस बहुप्रचारित और स्थापित मान्यता को ध्वस्त करता है । जैसे हमारे पाश्चात्य शिक्षा में दीक्षित तथाकथित नवप्रबुद्ध वर्ग में विगत 100 वर्षों से अधिक समय से यह मान्यता गहरा गई है कि भारत में शिक्षा हिन्दुओं और मुख्यत: द्विजों तक सीमित थी और मुसलमानों के केवल वे ही बच्चे स्कूलों में पढ़ने आते थे जो प्रतिष्ठित घरों के हैं । प्रस्तुत आंकडों के अनुसार तमिलभाषी क्षेत्रों में दक्षिण अर्काट में वहां पढ़ रहे बच्चों में मात्र 13 प्रतिशत ही द्विज कही जाने वाली जातियों के हैं और मद्रास में इन द्विज बच्चों का प्रतिशत मात्र 23 प्रतिशत था । वहीं शूद्र कहीं जाने वाली जातियों के स्कूल में पढ़ रहे छात्रों की संख्या दक्षिण अर्काट में 76.19 प्रतिशत और मद्रास में 68.62 प्रतिशत है । मद्रास के सेलम में तथाकथित शूद्रों एवं अन्य द्विजेतर या वर्णोत्तर (पंचम वर्ग) जातियों के स्कूली बच्चों की संख्या 66.76 प्रतिशत है जबकि तथाकथित द्विजों की संख्या लगभग 15 प्रतिशत है । चिंगलपेट में शूद्र माने जाने वाले जाति समूहों के छात्रों की संख्या 71.47 प्रतिशत है । तथा संजौर में यह संख्या 61.17 प्रतिशत है । यदि शूद्रों के साथ-साथ गैर द्विज जातियों और वर्णोत्तर या पंचम वर्ण के बच्चों की सम्मिलित संख्या को देखें तो चिंगल में यह 78 प्रतिशत है और सेंजौर में 75 प्रतिशत से कुछ अधिक है। शूद्रों और गैर द्विज छात्रों की सम्मिलित संख्या तिन्नेवाली में 81 प्रतिशत से अधिक है । मलावार में तथाकथित शूद्रों तथा अवर्ण जातियों के छात्रों की संख्या 54 प्रतिशत के लगभग है । कन्नड भाषी बेल्लारी के तथाकथित द्विजों के छात्रों की संख्या कुछ अधिक है - 33 प्रतिशत । परन्तु शेष 63 प्रतिशत संख्या शूद्रों व अवर्ण जाति के छात्रों की है । उड़ीया भाषी गंजाम जिले में भी प्राय: ऐसी ही स्थिति है । मात्र तेलगू भाषी कुछ क्षेत्रों में द्विज छात्रों की संख्या तथाकथित शूद्रों एवं अवर्ण बच्चों की संख्या से कुछ अधिक है । तेलुगुभाषी विजगापट्टनम में द्विज बच्चों की संख्या 48 प्रतिशत है तथा शूद्रों एवं अवर्ण बच्चों की सम्मिलित संख्या 41 प्रतिशत है । परन्तु तेलुगुभाषी नेल्लौर में द्विज बच्चों की संख्या 32.61 प्रतिशत तथा शूद्रों एवं अवर्ण बच्चों की संख्या 37.54 प्रतिशत है । कडप्पा में द्विज बच्चे 24 प्रतिशत हैं और शूद्र एवं अवर्ण बच्चे 41 प्रतिशत हैं । स्कूल में पढ़ रही लड़कियों की संख्या काफी कम है । जो लड़कियां पढ़ने जाती थी उनमें भी ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यों की संख्या कम होती थी और शूद्रों एवं अन्य अवर्ण जातियों की लड़कियों की संख्या उससे कुछ अधिक है । मालावर क्षेत्र में स्कूलों में पढ़ रही लड़कियों की संख्या अपेक्षाकृत अच्छी है । वहां मुसलमान लड़कियों की संख्या भी अपेक्षाकृत बहुत ऊंची है । स्कूलों में पढ़ रही कुल 2190 छात्राओं का वर्गीकरण कुछ इस प्रकार है :-

मुसलमान छात्राएं	-	1122
शूद्र छात्राएं	-	707

अन्य जाति की छात्राएं - 343

ब्राह्मण जाति की छात्राएं - 05

वैश्य जाति की छात्राएं - 13

उसी समय तीन ब्राह्मण छात्राएँ तत्वज्ञान एवं विधि पढ़ रही हैं और गणित, ज्योतिष पढ़ने वाली 38 छात्राओं में उनका वर्गीकरण इस प्रकार है :-

शूद्र छात्राएं- 19

अन्य जाति की छात्राएं - 14

वैश्य जाति की छात्राएं - 05

स्कूल न जाकर निजी स्तर पर पढ़ने वाली 41 छात्राओं का विवरण इस प्रकार है :-

ब्राह्मण जाति की छात्राएं - 03

वैश्य जाति की छात्राएं - 05

शूद्र छात्राएं- 19

अन्य जाति की छात्राएं - 14

जिस समय के ये आंकड़े हैं उस समय मुसलमान लड़कों की संख्या 3196 थी जबकि मुसलमान छात्राओं की संख्या 1122 थी। इतना ऊंचा अनुपात तो सन् 1920 व सन् 1930 में भी नहीं रहा होगा ।

मद्रास प्रेसीडेन्सी की रिपोर्ट में जो तथ्य उभर कर आये हैं, वैसे ही तथ्य बंगाल के पांच जिलों को लेकर इस विषय में एडम की जो रिपोर्ट है उसमें मिलते हैं, वह अधिक विस्तृत है और उसमें छात्र, शिक्षक, विषय, पुस्तकें एवं विद्या, व्यवस्था से संबंधित विस्तृत तथ्य मिलते हैं । इस रिपोर्ट में शिक्षकों की जातियों का जो परिचय मिलता है, वह इस तथाकथित मान्यता को ध्वस्त करता है कि अध्यापन पर मात्र ब्राह्मणों का ही एकाधिकार रहा है । अध्यापकों की जातियों के बारे में एडम की जो रिपोर्ट है उसमें यह तथ्य उभर कर आता है कि शिक्षकों में वे जातियां भी सम्मिलित हैं, जिन्हें अस्पृश्य बताया जाता है । यह तथ्य भी उभरता है कि कायस्थ शिक्षकों की संख्या ब्राह्मण शिक्षकों से अधिक है । फारसी अरबी स्कूलों में मुसलमान शिक्षकों के साथ साथ ब्राह्मण, कायस्थ, दैवज्ञ और गंधवनिक जाति के भी शिक्षक हैं । इन अरबी-फारसी स्कूलों में मुसलमान छात्रों के अलावा विविध हिन्दू जाति के छात्र भी थे। विलियम एडम की पहली रिपोर्ट 1835 ईस्वी में और दूसरी और तीसरी रिपोर्ट सन् 1838 ईस्वी में आयी थी ।

इससे पहले सन् 1790 ईस्वी में बंगाल के नवद्वीप विश्वविद्यालय की एक रिपोर्ट है जिसके अनुसार वहां 1100 विद्यार्थी और 150 अध्यापक उन दिनों थे । एडम का यह सर्वेक्षण इस अनुमान को मानकर चला कि बंगाल और बिहार की उन दिनों कुल जनसंख्या लगभग 4 करोड़ थी और वहां विद्यमान स्कूलों की संख्या एक लाख थी, अर्थात हर 400 व्यक्तियों पर एक स्कूल । इससे अनुमान लगाते हुए एडम ने लिखा है कि औसतन हर 63 लड़कों के लिए एक स्कूल बंगाल-बिहार में है । एडम का कहना है कि इन दोनों प्रान्तों में सरकारी आंकड़ों के अनुसार 150784 गांव है । इसमें से अधिकांश में कम से कम एक-एक स्कूल है, पर अधिक से अधिक लगभग एक तिहाई गांव को बिना स्कूल के मान लिया जाए जो एडम के अनुसार अधिकतम कल्पना है तो भी एक लाख स्कूल तो अवश्य होंगे, ऐसा उसका अनुमान था। एडम ने लिखा है कि गरीब से गरीब परिवार के बच्चे स्कूल जाते हैं और उनके माता-पिता इस ओर अवश्य ध्यान रखते हैं । इस रिपोर्ट में एडम लिखता है कि ये स्कूल देशी लोगों की जीवन-शैली और सामाजिकता का अन्तरंग अंग है । प्राय: गांव के प्रतिष्ठित व्यक्ति के घर में या उसके समीप या किसी गुरू के घर में स्कूल चलते हैं आस-पडौस के सभी बच्चे वहां आते हैं इसमें सर्वाधिक धनी व प्रतिष्ठित परिवार के बच्चे भी शामिल है । 5 या 6 साल की आयु के बच्चे आते हैं और ग्यारह वर्ष तक उनकी प्राथमिक शिक्षा पूरी हो जाती है । एडम ने इस शिक्षा की विधि का जो विवरण दिया है, वह इस प्रकार है :-

पहले 8-10 दिन स्लेट पर या भूमि पर अंगुलियों से स्वर व्यंजन लिखना सिखलाया जाता है । फिर पेंसिल या सफेद मिट्टी (खडिया) से बच्चे लिखते हैं उसके बाद ताड़ पत्र पर मरूई की लेखनी से लिखने का अभ्यास करते हैं । एडम ने स्याही बनाने की देशी विधि भी लिखी है । व्यंजनो को जोड़ना, शब्द बनाना, वर्णोच्चारण सीखना, गिनती लिखना, धन, भार एवं माप की गिनती सीखना, विशिष्ट व्यक्तियों वस्तुओं एवं स्थलों के नाम लिखना सीखना, यह सारा कौशल साल भर में सिखा दिया जाता है । आगे अंकगणित, खेत की नाप-जोख, खेती एवं वाणिज्य संबंधी लेखा-जोखा सिखाया जाता है । विशेषकर गांव में खेती से संबंधित लेखा व कस्बों व शहरों में व्यापार-वाणिज्य तथा आख्यान लिखना और याद करना सिखलाया जाता है, एडम को इस बात पर चिन्ता थी कि वैसी कोई स्पष्ट नैतिक शिक्षा यानी रिलीजस शिक्षा यहां इन स्कूलों में नहीं दी जाती, जैसे इंगलैण्ड में उन दिनों दी जाती रही थी । एडम का यहां अभिप्राय ईसाई मान्यताओं के प्रचार से था । यह अभाव एडम को खटक रहा था ।

एडम की रिपोर्ट में साधारण स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों का भी वर्णन है । इनमें साहित्य में राम-जन्म व सुन्दरकांड (रामचरितमानस्) आदि पर्व (महाभारत), सूर्य पुराण (पुराण अंश), गीत-गोविन्द, हितोपदेश (संस्कृत), नीति कथा (बांग्ला) दान लीला, गुरू वंदना, सरस्वती वंदना, दाता कर्ण, गंगा वंदना, नीति वाक्य, आदि । व्याकरण में शब्द सुनन्त, अमरकोष, अष्ट धातु, अष्ट शब्दी आदि, गणित में शुभंकर और उग्र बलराम, ज्योतिष में ज्योतिष विवरण, दिग्दर्शन आदि सम्मिलित हैं । इससे आगे के अध्ययन में पाणिनीय अष्टाध्यायी, पंतजलि का महाकाव्य, सिद्धांत कौमुदी, सिद्धांत मंजूषा, लघु कौमुदी, सरस्वती प्रक्रिया आदि व्याकरण ग्रंथ । शाकुन्तल, रघुवंश, नैषध, कुमार संभव तथा भट्टि, दंडी, भारवी आदि की साहित्यिक रचनाऐं तथा काव्य प्रकाश, साहित्य दर्पण आदि काव्य विवेचक ग्रन्थ । तिक्षि तत्व, प्रायश्चित तत्व, शुद्धि तत्व, श्राद्ध तत्व, आन्तिकतत्व, समय शुद्धि तत्व, ज्योतिष तत्व, प्रायश्चित विवेक, मिताक्षर, श्राद्ध विवेक, विवाह तत्व, दायतत्व आदि विविध ग्रन्थ एवं वेदान्त सांख्य, मीमांसा, तंत्र, तर्कशास्त्र, गणित, ज्योतिष, फलित ज्योतिष आदि के ग्रन्थ पढ़ाये जाने का विवरण है । फारसी-अरबी स्कूलों में गुलिस्तां, शाहनामा, युसुफ और जुलेखा, अल्लामीख, सिराजिया, हिदाया, मिसकातुल, मिसाबी, मीजान, मिसबा, कायन्यिया, तहजीब, कुरान आदि पढ़ाने का विवरण है ।

मद्रास और बंगाल-बिहार के समान ही अन्य राज्यों की स्वदेशी शिक्षा व्यवस्था का वर्णन अंग्रेजी लेखकों ने किया है । सन् 1820 ईस्वी के आस पास बम्बई प्रेजिडेन्सी के बारे में वहां के एक वरिष्ठ अधिकारी जी. एल. प्रेडक्गास्ट ने लिखा है कि :-

'हमारे क्षेत्र में शायद ही कोई छोटा सा भी गांव ऐसा हो जहां एक स्कूल न हो । बड़े गांव में तो एक से अधिक स्कूल हैं ।' इसी प्रकार सन् 1882 में पंजाब के बारे में डॉ. जी. डब्लू. लिटनर ने वहां की शिक्षा व्यवस्था के बारे में लिखा है कि अंग्रेजी आधिपत्य आने से पहले पंजाब के हर गांव में कम से कम एक स्कूल था । लिटनर की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि पंजाब में शिक्षा का माध्यम पंजाबी, हिन्दी और संस्कृत था । लिटनर लिखता है कि पंजाब में ऐसा एक भी मंदिर, मस्जिद या धर्मशाला नहीं, जहां एक स्कूल न हो । हर ग्रामीण अपने यहां के शिक्षक को अपने उत्पादन का एक अंश देने में गर्व का अनुभव करता है । लिटनर ने पंजाब में 5 तरह के स्कूल वर्ग गिनवाये हैं :-

1. गुरूमुखी स्कूल, 2. मकतब मदरसा और कुरान स्कूल, 3. चटसाल 4. पाठशाला और सैकुलर हिन्दू स्कूल, 4. मिश्रित शिक्षा संस्थाएं - फारसी, वर्नाकुलर और एंग्लो वर्नाकुलर स्कूल तथा 5. सिक्खों, मुसलमानों और हिन्दूओं की लड़कियों के स्कूल ।

लिटनर ने लिखा है कि हिन्दू लड़कियों को घर पर ही पढ़ाया जाता था । लिटनर के हिसाब से सन् 1850 में पंजाब में ब्रिटिश आधिपत्य से पूर्व कम से कम 3 लाख 30 हजार छात्र-छात्राएं पंजाब में पढ़ रहे थे । यह संख्या ब्रिटिश आगमन के बाद सन् 1882 में घटकर मात्र 1 लाख 90 हजार के लगभग ही रह गई थी । पढ़ाये जाने वाले विषयों का जो विवरण लिटनर ने दिया है, उसके अनुसार तत्कालीन पंजाब में अंग्रेजों के आधिपत्य से पहले गणित, व्याकरण, ज्योतिष, तर्क, आयुर्वेद, विधि, दर्शन और संस्कृत साहित्य के लगभग वही ग्रन्थ हैं जो मद्रास या बंगाल में पढ़ाये जाते हैं । क्षेत्रीय साहित्य की पुस्तकें, कथा-कहानी, नाटक, नीति कथा आदि अंशत: प्रत्येक क्षेत्र में प्राय: स्थानीय होती थी । इस प्रकार शिक्षा के अखिल भारतीय स्वरूप के साथ-साथ क्षेत्रीय रूप भी स्वाभाविक रूप से दिखलाई पड़ता है । विभिन्न विवरणों से यह भी ज्ञात होता है कि शिक्षा का माध्यम क्षेत्रानुसार बंगाल-बिहार में बांग्ला, हिन्दी और संस्कृत, मद्रास प्रेजिडेन्सी में क्षेत्रानुसार तमिल, तेलुगु, कन्नड एवं उड़िया तथा संस्कृत थी ।

शिक्षा के उपरोक्त विवरण स्पष्ट करते हैं कि भारत उन दिनों शिक्षा की दृष्टि से हीन नहीं था और महात्मा गांधी का सन् 1931 में लंदन की एक विशिष्ट सभा में कहा गया यह कथन पूर्णत: प्रमाणिक है कि अंग्रेजी राज्य में भारत में शिक्षितों की संख्या घटी है क्योंकि अंग्रेजों ने स्वदेशी विद्या के 'सुन्दर वृक्ष' की जड़ों को खोदकर देखा और फिर वे खुदी हुई जडें खुदी ही रहने दी ।

अंग्रेजों के आगमन के बाद ज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में जो दो बातें हुई, उसमें पहली थी कि परम्परागत भारतीय विद्वान सामाजिक क्षेत्र से अलग-थलग हो गये और नये संकटपूर्ण वातावरण में जिस हद तक संभव था, उस हद तक अपने को बचाते हुए धार्मिक पुस्तकों और कर्मकांड में सीमित होते चले गये । और दूसरे सन् 1830 के बाद अंग्रेजी भाषा के माध्यम से एक नया शिक्षित वर्ग पैदा होना शुरू हुआ जो अंग्रेजी शैक्षिक और सांस्कृतिक साहित्य के आधार पर पनपा है जिन्हें यह गलतफहमी पालने का मौका मिल जाता है कि वे अंग्रेजों के बराबर हैं । यद्यपि अंग्रेज हमेशा उन्हें यह महसूस कराते रहे कि वे अंग्रेजों से कितने निम्न कोटि के हैं । अत: अब हम देख सकते हैं कि हमारे वर्तमान के लिए अतीत की क्या प्रासंगिकता है ? ◆